International Research Journal of Humanities, Language and Literature
ISSN: (2394-1642)
Impact Factor 5.401 Volume 7, Issue 11, November 2020
Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
Website-www.aarf.asia, Email : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

# श्री शंभुनाथ बलियासे 'मुकुल' की पत्रकारिता

डॉ. ध्रुव प्रसाद देव
सहायक प्रोफेसर, हिन्दी–विभाग,
देवघर कॉलेज, देवघर
सिद्धु कान्हु मुर्मू विश्वविद्यालय, देवघर

**सारांश :**

'जितने पत्रकार, उतने विचार', फलतः 'काम कम और प्रचार अधिक' पर लोग विश्वास कर रहे हैं। तभी तो 'प्रोपेगैण्डा' प्रभु का प्रताप सर्वत्र दिखता है। लोग 'पब्लिक, ओपिनियन' को 'बोल्ड' करने के लिए 'प्रेस', 'पेपर' और 'प्लेटफॉर्म' की बात करते हैं। पत्र–पत्रिका, समाचार पत्र, प्रकाशन आदि का सामूहिक नाम ही पत्रकारिता है। पत्र–पत्रिका और समाचार पत्र आदि के लिए ही लेखन–कार्य कर जीविकोपार्जन करने वाले प्रायः 'पत्रकार' के नाम से जाने जाते हैं। विचार–स्वातंत्रय का प्रकाशन पत्र–पत्रिकाओं और समाचार पत्रों के माध्यम से ही होता है। पत्रकारों में सम्पादक का स्थान महत्त्वपूर्ण होता है क्योंकि संपादक पत्रों के लिए स्वयं नहीं लिखता, पर उनमें प्रकाशित समाचारों का, विषयों का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व उसी पर होता है। उपसंपादक, संशोधक आदि भी पत्रकार के ही अंतर्गत आते हैं। देश–विदेश की सारी हलचल का नवीनतम लेखा–जोखा पत्रों के द्वारा ही होता है। कलकत्ता, मुंबई जैसे विशाल नगरों में निम्न आर्थिक और शैक्षिक स्तर के व्यक्ति भी, जो अटक–अटक कर पढ़ पाते हैं, अखबार लिए हुए दिखाई देते हैं। निश्चय ही, यह हमारी व्यापक सामाजिक चेतना का प्रतीक है। पत्रकारों को इतिहास, भूगोल, अर्थनीति, राजनीति, विदेश–नीति का पूरा ज्ञान होना चाहिए। कबीर के शब्दों में पत्रकारों को 'सूप सुभाई' (सूप के स्वभाव वाला) होना चाहिए। तथ्य ग्रहण की शक्ति, संतुलन बनाये रखने की क्षमता, उचित निर्णय देने का ज्ञान, प्रचलित विचार धाराओं का सम्यक् ज्ञान पत्रकारों के लिए आवश्यक है। पं॰ प्रताप–नारायण, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, गुलाब राय, पं॰ बाबू राव विष्णु पराड़कर आदि पत्रकारों ने हिन्दी पत्रकारिता को सतत आगे बढ़ाया। बिहार के हिन्दी पत्रकारों में शिवपूजन सहाय का नाम सदा स्मरणीय रहेगा, जिन्होंने अपनी प्रतिभा से न जाने कितने साहित्यकार और पत्रकार उत्पन्न किये और गढ़े।

कूट शब्द : भाषा एवं साहित्य, लेखन, अखबार, पत्रकारिता, उत्तरदायित्व, संशोधक, षड्यंत्र, आयुर्वेद आदि।

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

## विषय विस्तार

हिन्दी पत्रकारिता को सर्वप्रथम प्रस्तुत करने का श्रेय बाबू रायकृष्णदास को है। उन्होंने हिन्दी के 'सामाजिक पत्रों का इतिहास' नामक पुस्तक लिखकर इस दिशा में सर्वप्रथम पग उठाया था। इसके उपरांत बाबू बालमुकुन्द गुप्त के 'गुप्त निबंधावली' द्वारा इस विषय पर पर्याप्त प्रकाश पड़ा। इसमें गुप्त जी द्वारा 16 उर्दू अखबारों और 25 हिन्दी अखबारों का परिचय दिया गया है। उपर्युक्त दोनों सूत्रों के आधार पर हिन्दी संसार राजा शिवप्रसाद द्वारा प्रकाशित 'बनारस अखबार' (सन् 1845) को हिन्दी का सर्वप्रथम अखबार मानने लगा। परन्तु आचार्य रामचन्द्र शुक्ल 'उदन्त–मार्त्तण्ड' को हिन्दी का सर्वप्रथम अखबार मानते हैं, जिसका प्रकाशन 30 मई, 1826 को श्री जुगल किशोर शुक्ल के संपादन में हुआ था। इस पत्र में खड़ी बोली का उल्लेख 'मध्यदेशीय भाषा' के नाम से किया गया था। एक वर्ष के बाद यह पत्र धनाभाव, ग्राहकाभाव और सरकारी सहायता न मिलने के कारण बंद हो गया। उन दिनों सरकारी सहायता के बिना किसी भी पत्र का चलना असंभव था, क्योंकि ग्राहकों की संख्या नगण्य थी। पुनः नये सिरे से हिन्दी पत्रकारिता श्री राजा राममोहन राय के तत्त्वावधान में पनपती है। इनके तत्त्वावधान एवं श्री नीलरतन हालदार के संपादकत्व में बंगला, हिन्दी और उर्दू–तीन भाषाओं की सम्मिलित पत्रिका 'बंगदूत' प्रकाशित हुई। यह मात्र 82 दिनों तक चलकर समाप्त हो गयी।

सन् 1861 का वर्ष हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इस वर्ष हिन्दी की छः पत्रिकाएँ निकलीं। राजा लक्ष्मण सिंह का 'प्रजाहितैषी' इसी वर्ष निकला। गुलाबशंकर के संपादकत्व में 'तत्त्वबोधिनी' का प्रकाशन 1865 ई॰ में प्रारंभ हुआ।

सन् 1920 से हिन्दी पत्रकारिता एक नया मोड़ लेती है। 1920 में 'माधुरी' का प्रकाशन हुआ। उग्र विचारों को फैलाने में 'चाँद' का हाथ सबल रहा। इसके 'मारवाड़ी अंक' और फाँसी अंक ने मारवाड़ियों और सरकार का कोपभाजन बनाया। पुनः महादेवी वर्मा के सम्पादकत्व में यह महिला–जगत् का मुखपत्र बन गया। नवीन पत्रिकाओं, में 'विशाल भारत', 'सुधा', 'हंस', 'विश्वामित्र', 'पारिजात', 'हिमालय', 'पाटल', 'नयापथ', 'आलोचना' आदि के नाम महत्त्वपूर्ण हैं।

छपाई और सफाई में 'नवनीत' सबसे आगे है। विषय–सामग्री की दृष्टि से 'ज्ञानोदय' उत्तम है। 'नई धारा' और 'कल्पना' स्मरणीय है। 'कादम्बिनी' मासिकों की धुरी है। बिहार के मासिकों में 'हिमालय', 'पारिजात', 'पाटल', 'अवंतिका' की समकक्षता किसी में नहीं मिलती, क्योंकि इनमें परिवर्त्तित साहित्यिक युग का उफान है।

हिन्दी के स्वस्थ त्रैमासिकों में 'विश्वभारती', 'आलोचना', 'सम्मेलन पत्रिका', 'नागरी–प्रचारिणी पत्रिका', 'साहित्यालोचन' (कानपुर) प्रमुख हैं। विदेशों में फीजी से प्रकाशित होनेवाला हिन्दी मासिक 'इंडियन टाइम्स' प्रमुख है। 'आज' का रविवासरीय अंक, 'धर्मयुग', 'हिन्दुस्तान' भी प्रमुख हैं।

हिन्दी पत्रकारिता के लिए स्वातंत्रयोत्तर युग 'स्वर्णयुग' कहा जायेगा, क्योंकि कम पढ़े–लिखे लोग भी पत्र–पत्रिकाओं में रुचि लेने लगे हैं। अब हिन्दी पत्रकारों के सम्मेलन भी होते देखे जा रहे हैं। यदि इस प्रशिक्षण केन्द्र को मूर्त्त रूप दिया गया, तो निश्चय ही हिन्दी पत्रकारिता का मानदण्ड ऊँचा उठेगा।[3]

हिन्दी पत्रकारिता में मुकुल जी का योगदान

बिहार की पत्रकारिता के इतिहास में मुकुल जी ने प्रभूत योगदान किया है। 'प्रकाश साप्ताहिक' के माध्यम से इन्होंने स्वस्थ पत्रकारिता का जो दृष्टांत उपस्थित किया, वस्तुतः वह बिहार की पत्रकारिता के लिए गौरवमय है। वे 1940 से 1947 के अप्रैल तक अध्यापन करते रहे। इस अवधि में वे छिट–पुट संवाद–प्रेषण का काम भी किया करते थे। इसे वे स्वेच्छा से निःशुल्क किया करते थे। इनके समाचार पटना के पत्रों में प्रकाशित होते रहते थे। इसलिए स्थानीय लोग तब इनको अध्यापक के साथ–साथ संवाददाता भी मानते थे। 1942 के आंदोलन के दिनों में दो–तीन बार कई महीनों के लिए व्यतिक्रम हुए। सरकारी अधिकारियों से मौखिक और कागजी कहा–सुनी भी हुई। अंत में खिन्न होकर उन्होंने नौकरी से त्यागपत्र दे दिया।

पटना पहुँचने पर 'मुकुल' जी को ऐसे दिग्गज स्वनामधन्य पत्रकार का सान्निध्य, स्नेह और शुभाशीर्वाद प्राप्त हुआ, जिसने इनके पत्रकार–जीवन को निखार कर रख दिया। इसे इस तरह से भी कहा जा सकता है कि मुरली बाबू के शुभाशीर्वाद, निर्देशन और प्रशिक्षण से कुछ दिनों में ही इनकी पत्रकारिता लोगों की नजरों में आने लगी। उन दिनों पटना से हिन्दी में योगी, नवशक्ति, हुँकार और 'स्वदेश' साप्ताहिक निकल रहे थे, जिनके यशस्वी संपादक क्रमशः ब्रजशंकर वर्मा, युगल किशोर शास्त्री, सुकदेव राय और पं॰ रामदयाल पांडेय थे। श्रीयुक्त रामवृक्ष वेनीपुरी जी के संपादकत्व में 'जनता' साप्ताहिक का भी प्रकाशन हो रहा था, जो पार्टी की पत्रिका थी। इन सब का प्रकाशन पटना में वर्षों से हो रहा था। अतः ये अपने–अपने क्षेत्र में चर्चित भी थीं। इनके बीच पहुँच कर छठे हिन्दी साप्ताहिक के रूप में 'प्रकाश' ने 1949 में अपना परिचय दिया। 'प्रकाश' में प्रधान संपादक की जगह मुरली मनोहर प्रसाद तथा सहायक की जगह श्री नरेश का नाम जाने लगा। श्री नरेश के काम छोड़कर चले जाने के बाद मुरली बाबू के साथ 'मुकुल' जी का नाम संयुक्त संपादक के रूप में जाने लगा। मुरली बाबू को हिन्दी नहीं के बराबर आती थी। अतः 'प्रकाश' के संपादक का सारा भार 'मुकुल' जी को ही दिया गया। आवश्यकतानुसार वे मुरली बाबू से उनके अमूल्य सुझाव लिया करते थे।

'कन्ट्रोल' के दिनों में एक बार सारे बिहार में दैनिक जीवन के आवश्यक सामानों का अभाव हो गया। लोगों में हाहाकार मच गया। तब एक दिन एक ही समय सारे बिहार के सभी छोटे–बड़े शहरों में छापे मारे गये, जिसमें अत्यधिक मात्रा में छिपाकर रखे गये चावल, गेहूँ, चीनी, किरासन तेल, कपड़ा, सीमेंट और अन्यान्य सामान सभी व्यापारियों के पास से निकले थे। इस घटना को लेकर सभी पत्र–पत्रिकाओं में समाचार प्रकाशित किये गए थे। 'प्रकाश' में न सिर्फ समाचार प्रकाशित किया गया,

बल्कि तिलमिला देनेवाला संपादकीय लेख 'मुकुल' जी ने लिखा, जिसे पढ़कर संबंधित व्यापारियों को बड़ा क्रोध आया। 'प्रकाश' के संचालक भी एक व्यापारी थे। मुकुल जी ने संपादकीय में प्रायः सभी व्यापारियों की खबर ली थी। उन्हें कुकर्मी, समाज तथा राष्ट्र का दुश्मन कहते हुए सरकार से कड़ी कार्यवाही करने की अपील की थी। इतना ही नहीं इनके सामाजिक बहिष्कार का भी सुझाव दिया था, जिसे पढ़ कर कुछ व्यापारी बड़े गुस्से में आये और उन्होंने संपादक को निकाल देने का सुझाव पत्र–संचालक को दिया। कई ने पत्र लिखकर और धनबाद, सिंहभूम तथा भागलपुर के कई ने पटना पहुँच कर 'मुकुल' जी को निकालने की चेष्टा की। संचालक महोदय ने उनकी बातों से प्रभावित होकर 'मुकुल' जी से कैफियत तलब की तथा प्रतिवाद के साथ क्षमा–याचना प्रकाशित करने को कहा, पर मुकुल जी ने ऐसा करने से साफ इनकार कर दिया। बात मुरली बाबू के पास गई और उन्होंने संपादकीय को पढ़वाकर सुना। पढ़ना शेष होने पर मुरली बाबू कुर्सी से उचकते हुए कड़क कर बोले–''बिल्कुल ठीक लिखा है, इसका प्रतिवाद नहीं छपेगा। आप व्यापारियों को कोर्ट में मुकदमा दायर करने को कह दीजिए।'' संचालक महोदय चुप होकर उनके चेम्बर से बाहर आ गये। उनके चेम्बर से हटने के बाद मुरली बाबू ने मुकुल जी की पीठ को थपथपाया और कहा कि ''अब मेरा नाम हटाकर प्रधान संपादक की जगह तुम अपना नाम दिया करो, यह मेरा हुकुम है।''

पटना के अपने पत्रकार–जीवन में वे सभी पत्रकारों एवं साहित्यकारों के प्रिय–पात्र बने रहे। बिहार श्रमजीवी पत्रकार–संघ की स्थापना करने वाले पत्रकारों में से ये भी एक थे। मद्रास में जब अखिल भारतीय पत्रकार–संघ का अधिवेशन होने जा रहा था, तब बिहार से भेजे जाने वाले प्रतिनिधि–पत्रकारों में आपका भी नाम था। उन दिनों पटना में हिन्दी पत्रकार संघ भी था, जिसके ये भी सम्मान्य सदस्य थे। जब तक ये पटना–बिहार में रहे, तब तक दानों ही पत्रकार संघों के सदस्य रहे।

सैद्धांतिक मतभेदों के कारण जब 'प्रकाश' के संचालक ने अकारण इनको कार्यमुक्त कर दिया, तब उन्होंने श्रम विभाग में अन्यायपूर्ण उक्त आदेश के विरुद्ध मुकदमा दायर कर दिया। मुकदमा पटना 'लेबर ट्रेव्यूनल' में चला। इस मुकदमे को 'बिहार श्रमजीवी पत्रकार–संघ' ने लड़ा था, जिसमें संघ की जीत हुई थी। ट्रेव्यूनल में मुकदमा चलाने के समय ही जब 'प्रकाश' बन्द कर दिया गया, तब आपको बड़ी वेदना का अनुभव हुआ। इस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा था कि ''यदि मैं यह जानता कि मेरे मुकदमा दायर करने से 'प्रकाश' बन्द कर दिया जायेगा, तो हरगिज मुकदमा दायर नहीं करता, क्योंकि 'प्रकाश' को लोकप्रियता दिलाने में मैंने एड़ी–चोटी का पसीना एक किया था। अपने शरीर के खून से सींच कर उसे सुस्वस्थ, प्रभावी जीवन जीने का वातावरण और क्षेत्र दिया था। यह मेरा मानस – पुत्र था। अतः मैं इससे बड़ी वेदना का अनुभव कर रहा हूँ। 'प्रकाश' के माध्यम से उन्होंने आदिवासियों की भी बड़ी सेवा की थी। राष्ट्रभाषा हिन्दी और राष्ट्रीय धर्म, संस्कृति के विरुद्ध आवाज

उठाने वालों को यह अपनी संपादकीय में बराबर आड़े हाथों लिया करते थे। ये राष्ट्रीयता के विरुद्ध, न्याय के विरुद्ध, स्वस्थ सामाजिकता के विरुद्ध आचरण करने वालों से कभी समझौता नहीं कर सके।

अज्ञेय जी 'तारसप्तक' के द्वारा जब प्रयोगवाद चलाने में लग गये, तब बिहार के तीन साहित्यकारों ने 'नकेनवाद' का श्री गणेश किया। श्री नलिन विलोचन शर्मा, श्री केशरी कुमार और श्री नरेश 'नकेनवाद' के उद्घोषक थे। 'नकेनवाद' के घोषणा–पत्र में दस सूत्र थे। 'प्रकाश' नकेनवादियों का मुख्य पत्र बन गया और दस सूत्रीय घोषणा–पत्र का प्रकाशन सर्वप्रथम 'प्रकाश' में किया गया। इसके बाद लगातार नकेनवादी कविताएँ 'प्रकाश' में प्रकाशित होती रहीं। धीरे–धीरे नकेनवादियों की संख्या बढ़ती गयी और वे 'प्रकाश' में प्रकाशित होते रहे। पीछे जब शिवचन्द्र शर्मा 'पाटल' के संपादक हुए, तब उसमें भी उक्त दस सूत्रीय घोषणा प्रकाशित की गयी, जिसका उल्लेख ऊपर भी किया जा चुका है।

'प्रकाश' के बन्द होने के बाद 'मुकुल' जी डेढ़–दो वर्षों तक देवघर हिन्दी विद्यापीठ के 'राजेन्द्र शोध संस्थान' में रहे। 1964 में कलकत्ते से बुलावा आया और एक ऐसे पत्र में संपादक के रूप में कार्य करने के लिए चले गए, जिसकी ये कभी कल्पना भी नहीं कर सकते थे। भारतीय चिकित्सा–पद्धति आयुर्वेद के औषधि–निर्माता संस्थान 'डाबर' की ओर से 'आयुर्वेद – विकास' नामक हिन्दी मासिक का प्रकाशन कलकत्ते से 1962 में आरंभ किया गया था। इसके संपादक सुप्रसिद्ध पत्रकार पं॰ विष्णुदत्त जी शुक्ल थे। डेढ़–दो वर्षों तक संपादन करने के बाद शुक्ल जी का कानपुर में जब देहान्त हो गया तब 'डाबर' के संचालकों की ओर से सुयोग्य संपादक की खोज में तात्कालिक पब्लिसिटी मैनेजर पं॰ शिवसागर जी अवस्थी निकले और श्री 'मुकुल' जी को ढूँढ़ कर कलकत्ता ले गए। 'आयुर्वेद' ऐसा विषय था, जिससे इनका कोई संबंध नहीं था। ऐसे विषय के पत्र का संपादक होना असमंजस में डाल देने वाली बात थी। ग्रीष्मावकाश का समय था और 'मुकुल' जी कलकत्ता लिवा ले गए। वहाँ जाने पर कार्यालय में 'आयुर्वेद विकास' की कुछ प्रतियाँ तथा अन्यान्य आयुर्वेदिक पत्र–पत्रिकाएँ जो देश के विभिन्न भागों से निकलती थीं, उनकी प्रतियाँ इन्हें देखने को दी गयीं। दो दिनों तक उन्हें देखने के बाद इनके सामने पं॰ शिवसागर अवस्थी जी आये और 'सचित्र आयुर्वेद' की एक प्रति जो उसी महीने की थी, दिखाते हुए बोले, ''आपको इसके मुकाबले 'आयुर्वेद–विकास' को खड़ा करना है। मैं जानता हूँ आप इसे कर सकेंगे। आपको जिन चीजों की जरूरत हो, वे सभी जुटा दी जायेंगी। आप कार्य आरंभ कीजिए। 1964 से ही ये आयुर्वेद विकास का काम सम्पन्न करते जा रहे हैं।

'आयुर्वेद विकास' की लोकप्रियता का सारा श्रेय 'मुकुल' जी की मंजी हुई लेखनी, अन्याय के विरुद्ध जोरदार संपादकीय विचार और राष्ट्रीयता की भावना को है। वे राष्ट्रभाषा हिन्दी के साथ–साथ अब राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद के लिए भी अपने को सजग प्रहरी मानते और प्रमाणित करते रहे हैं। चाहे कितनी भी बड़ी हस्ती क्यों न हो, यदि वे राष्ट्रभाषा हिन्दी या राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद को अमर्यादित – अपमानित करने की धृष्टता करते मिलते तो ये अपनी संपादकीय में उनका हुलिया

खराब करने में तनिक भी नहीं हिचकते। 'आयुर्वेद–विकास' को इन्होंने एक मात्र राष्ट्रभाषा हिन्दी की आयुर्वेदिक मासिक पत्रिका बना रखा है। एक भी अँग्रेजी का लेख, चाहे वह बड़े–से–बड़े आयुर्वेद–मनीषी का क्यों न हो, इन्होंने प्रकाशित नहीं किया। संचालकों के कहने पर भी ये नहीं मानते और सभी ऐसे लेखों को वापस करने में तनिक भी द्विधा का अनुभव नहीं करते। अपने 26 वर्षों के संपादन–काल में 'आयुर्वेद – विकास' को मुकुल जी ने जो स्वरूप प्रदान किया है, वह सर्वत्र अभिनंदनीय है। यह इनकी सफल पत्रकारिता ही है।

'आयुर्वेद – विकास' में विशेषांक – प्रकाशन की एक ऐसी परंपरा इन्होंने चलायी, जो आयुर्वेद – जगत में ज्ञानवर्द्धक एवं कौतूहल पैदा करने वाली हुई। विशेषतः विशेषांक के लिए विषय के चुनाव में जिस सूझ–बूझ का परिचय इन्होंने दिया है कि उसने 'आयुर्वेद–विकास' को किशोरावस्था में ही सुस्वस्थ प्रौढ़त्व प्रदान कर दिया है।

आयुर्वेद चिकित्सा–पद्धति के विरुद्ध जो भी षड्यंत्र चलते रहे, उसे सदा–सर्वदा के लिए समाप्त कर देने के प्रयत्न चलाये जाते रहे। मुकुल जी ने 'आयुर्वेद–विकास' द्वारा सबका डटकर मुकाबला किया। आज भी सीमारक्षक सिपाही की तरह 'आयुर्वेद–विकास' पूर्ण सतर्कता के साथ मोर्चे पर खड़ा है। राष्ट्रीय विचारों का ऐसा धुरंधर आयुर्वेद समर्थक पत्रकार अपने क्रिया–कलापों से आयुर्वेद–क्षेत्र का राष्ट्रपुरुष बन गया। मुकुल जी इस सत्य को भी स्वीकार करते रहे हैं कि जहाँ वे राष्ट्रीय पद्धति आयुर्वेद के प्रचार–प्रसार के लिए आयुर्वेद–विकास के माध्यम से अपना खून–पसीना एक करते रहे, आयुर्वेद की प्रतिष्ठा–रक्षा के लिए जहाँ कदम–कदम पर संघर्ष करते रहे, दृढ़ता और कौशल के साथ विविध आयुर्वेद–सम्मेलनों में इस भारतीय चिकित्सा–पद्धति पर भाषण करते हुए विरोधियों को मुँहतोड़ जवाब देते रहे, वहाँ आयुर्वेद जगत, ने राष्ट्रीय विचारों वाले व्यक्तियों ने, संस्थाओं ने उन्हें सम्मानित और अभिनंदित किया, उन्हें मर्यादा दी और पुरस्कृत भी किया। वस्तुतः मुकुल जी आयुर्वेद–पत्रकारिता के भीष्म पितामह माने गए हैं।

**निष्कर्ष :**

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अपनी सूझ–बूझ और मित्रों के सहयोग से कुछ ही दिनों में मुकुल जी ने 'प्रकाश' को साहित्यकारों, राजनीतिज्ञों और पत्रकारों के बीच चर्चित होने की पात्रता प्रदान कर दी। धीरे–धीरे पटना के सभी साप्ताहिक पत्रों में 'प्रकाश' का प्रत्येक अंक निखरता चला गया और उच्च से उच्चतर साहित्यकारों की रचनाएँ 'प्रकाश' में प्रकाशित होने लगीं। शिवगोपाल मिश्र एवं जयगोपाल मिश्र के सौजन्य से महाकवि निराला की तात्कालिक अप्रकाशित लगभग दो दर्जन रचनाएँ 'प्रकाश' के मुख्य पृष्ठ पर प्रकाशित होती रहीं। मुकुल जी उन दिनों इलाहाबाद में स्थापित 'निराला–परिषद्' के सदस्य भी मनोनीत किये गऐ थे। 'प्रकाश' में आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री, प्रभात

जी, दिनकर जी, आचार्य नलिन विलोचन शर्मा, डॉ॰ केसरी कुमार सिंह, श्री नरेश, श्री आर.सी. प्रसाद सिंह, अनूप लाल मंडल, कन्हैया, सदय, ब्रजकिशोर नारायण, हरेन्द्रदेव नारायण, शिवचन्द्र शर्मा, अंचल, रंजन सूरिदेव, उमाशंकर, द्वारका प्रसाद, उमानाथ, डोमन साहू, 'समीर', विन्ध्यवासिनी देवी, डॉ॰ माहेश्वरी सिंह महेश, राधाकृष्ण, राधाकृष्ण प्रसाद, प्रफुल्ल चन्द्र ओझा 'मुक्त', सरयू पंडा गौड़, नरेन्द्र नारायण लाल आदि साहित्यकारों की विभिन्न विधाओं की रचनाएँ प्रकाशित हुआ करती थीं। प्रगतिशील कवियों, नकेनवादियों का प्रकाश मुख्य पत्र बन गया था। 'नकेनवादी' की व्याख्या और दससूत्रीय घोषणा–पत्र का प्रकाशन 'प्रकाश' में ही किया गया था। दो वर्षों के बाद उस घोषणा–पत्र को पटना से ही प्रकाशित 'पाटल' मासिक में पुनः प्रकाशित किया गया था। अतः साहित्य–जगत में 'प्रकाश' की उन दिनों चर्चा हुआ करती थी। आप 'बिहार हिन्दी साहित्य–सम्मेलन' के लगातार तीन वर्षों तक कार्य–समिति के सदस्य तथा 'प्रेमचंद–परिषद्' के मंत्री और प्रचार–मंत्री रहे। 'बिहार साहित्य संघ' के भी आप मंत्री तथा प्रचार–मंत्री रहे। नृत्य कलामंदिर, पटना के वर्षों उपाध्यक्ष रहे।

**संदर्भ ग्रंथ**


1. देखें, श्री अर्जुन तिवारी – आधुनिक पत्रकारिता; विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
2. देखें – डॉ॰ कृष्णबिहारी मिश्र – हिन्दी पत्रकारिता।
3. हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास (भाग–13) नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
4. डॉ॰ इन्द्र सेंगर – बम्बई हिन्दी विद्यापीठ की पत्रिका–भारती – 1991
5. डॉ॰ महीप सिंह – प्रगतिशील मासिक संचेतना, वर्ष 1991, दिल्ली
6. डॉ॰ महीप सिंह – संचेतना (प्रगतिशील मासिक), दिल्ली, वर्ष 1991
7. 'वास्तव में जब साहित्यिक सौन्दर्यानुभूति में हमारी मानसिक शक्तियाँ प्रयुक्त होने लगती हैं तभी आलोचना का जन्म होता है।' डॉ॰ खत्री – आलोचना' इतिहास तथा सिद्धान्त, पृ. 14